'सदियों के सोये जाग उठे' कविता संग्रह में व्यक्त स्वतंत्रता संघर्ष एवं साम्प्रदायिकता विरोध

बीज शब्द : स्वंतत्रता संघर्ष तथा साम्प्रदायिकता विरोध, कविता संग्रह 'सदियों के साये जाग उठे'।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद जगह-जगह साम्राज्य विरोधी क्रांन्तियाँ हो रही थी 1945-47 में भारतीय जनता का क्रान्तिकारी उभार इस प्रक्रिया का पहला चरण था। कांग्रेस ब्रिटिश कूटनीति के नागपाश में पूरी तरह बंध गये थे। 1905 में बंगाल विभाजन की प्रतिक्रिया स्वरूप भारत में स्वदेशी क्रान्ति की जो लहर आई उससे अंग्रेज भयभीत हो गये थे और उन्होंने देश को साम्प्रदायिकता के हवाले करना शुरू कर दिया। डॉ॰ राम विलास शर्मा ने अपने कविता संग्रह 'सदियों के सोये जाग उठे' की कविताओं के माध्यम से स्वतंत्रता संघर्ष की तत्कालीन परिस्थितियों को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया तथा साम्प्रदायिक ताकतों का विरोध कर जनता को जागृत करने तथा उसको सही मार्ग दर्शन कराने का यथेष्ट प्रयास किया है। इन कविताओं का अध्ययन आज के परिप्रेक्ष्य में कितना सार्थक है इसका अनुमान आज की राजनीतिक समस्याओं को देखकर ही लगाया जा सकता है। अत: शर्मा जी की कविताओं ने स्वतंत्रता संघर्ष तथा साम्प्रदायिक शक्तियों का विरोध परखने का प्रयत्न किया है।

मंजू देवी
शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली।

ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
शोध संचयन

डॉ. रामविलास शर्मा हिन्दी की मार्क्सवादी समीक्षा के शिखर व्यक्तित्व के रूप में जितने चर्चित रहे, और हैं, उतना कवि रूप में नहीं। सम्भवत: इसीलिए उनकी कविताओं पर ध्यान नहीं दिया गया, किन्तु आलोचना की तरह ही उनकी कविताएँ भी अपनी अन्तर्वस्तु में सारगर्भित, प्रभावी और प्रगतिशील रही हैं। इसके साथ ही उनका व्यक्तित्व साम्राज्यवादी, उपनिवेशवादी तथा पूंजीवादी अपसंस्कृति का विरोधी रहा है। उनके व्यक्तित्व की पहचान उनके आचरण तथा चिंतन से होती है और उनके चिन्तन की अभिव्यक्ति उनके लेखन से हुई है।

'सदियों के सोये जाग उठे' कविता संग्रह के माध्यम से इनकी पहचान जनकवि के रूप में हुई। कथनी और करनी का भेद मिटाते हुए इन्होंने अपने व्यक्तित्व के अनुरूप ही साहित्य रचा है। इन्होंने समकालीन समस्याओं और विषमताओं पर तीखा प्रहार किया है। इस संबंध में विपिन ठाकुर लिखते है- ''डॉ. शर्मा ने अपनी वैचारिक मान्यताओं के अनुरूप ही अपनी कविताओं में मानव जीवन से संबंधित समाज और उसकी आपत्तियों- विपत्तियों से प्रसूत समस्याओं का अंकन किया है।''[1]

इनकी कविताओं की प्रसिद्धि के संबंध में एक बार केदारनाथ अग्रवाल से चर्चा करते हुए नरेन्द्र पुण्डरीक ने पूछा कि रामविलास जी कवि रूप में काफी चर्चित रहे है, उनका कोई कविता संग्रह नहीं है। इस पर केदार जी कहते हैं- ''रामविलास तो मूलत: कवि ही थे, वह तो निराला के विरोधियों को जबाब देने के लिए ही आलोचना में उतरे थे फिर जातीय बोध और उसके रचनाकारों के पक्ष में लगातार लिखने के कारण आलोचना में धंसते चले गये।''[2]

इन्होंने अपने रचनाकर्म की शुरूआत कविता के साथ की और तारसप्तक (1943) जैसे महत्त्वपूर्ण काव्य आयोजन में एक प्रतिष्ठित कवि के रूप में सम्मिलित होकर समय-समय पर कविताएं भी लिखीं, जो उनके विभिन्न कविता संग्रहों-'रूपतरंग', 'सदियों के सोए जाग उठे' तथा 'बुद्ध वैराग्य एवं प्रारम्भिक कविताएं' में संकलित हैं। रूपतरंग में उनका एक लम्बा लेख 'प्रगतिशील कविता की वैचारिक भूमिका' है। जिसमें जनता के राग विराग, ग्राम जीवन का सौन्दर्य, खेत खलिहान और लोकसंस्कृति का चित्रण हुआ है। 1988 में वाणी प्रकाशन से प्रकाशित इनका दूसरा संग्रह 'सदियों के सोये जाग उठे' प्रकाशित हुआ, जो उस समय के देश व्यापी जनउभार तथा कम्युनिस्ट पार्टी की राजनीति को प्रतिबिम्बत करता है। इसके बाद 1997 'बुद्ध वैराग्य एवं प्रारम्भिक कविताएं' संग्रह प्रकाशित हुआ जिसकी

अधिकतर कविताओं पर निराला का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

'सदियों के सोये जाग उठे' कविता संग्रह में स्वतंत्रता संघर्ष तथा देशी शासक वर्ग की जनविरोधी दुरंगी नीतियों का पर्दाफाश किया गया है। इसके संबंध में शिव कुमार मिश्र लिखते हैं- ''यह उपनिवेशवादी शासकों से सुलह-समझौते की दास्तान तथा जनतंत्र और साधारण जनों, मजदूरों, किसानों की बदहाली का आख्यान है।''[3]

इस संकलन की कविताओं को दो भागों में बांटा गया है इनकी अधिकतर कविताएं- अगिया वैताल, निरंजन तथा भजनदास के छद्म नाम से प्रकाशित हुई। जो कविताएं हास्य और व्यंग्य की थी, वे अगिया वैताल के नाम से और संघर्ष के लिए आन्दोलित करने वाली कविताएं निरंजन के नाम से प्रकाशित हुई। एक दूसरा कारण बताते हुए रामविलास शर्मा ने इसकी भूमिका में लिखा है- ''साप्ताहिक पत्रों में कई तरह की सामग्री होती थी उसके एक ही अंक में कही निरंजन कही अगिया वैताल के आ जाने से पाठक को अपने भावबोध का स्तर बदलने में असुविधा हो सकती है, यह सोचकर निरंजन की सारी कविताएं एक जगह दे दी हैं, अगिया वैताल की दूसरी जगह।''[4]

इस संकलन की अधिकतर कविताएं 1945-47 के बीच की हैं। उस समय जनता स्वाधीनता पाने के लिए अंग्रेजों से संघर्ष कर रही थी, चारों तरफ अकाल और भुखमरी फैली हुई थी देश साम्प्रदायिकता की आग में झुलस रहा था। इन सबके ठेकेदार नौकरशाहों, देशी दलालों, नबाबों, पूंजीपतियों बड़े जमीदारों तथा जनता के हितों की उपेक्षा करने वाले नेताओं आदि पर कवि ने करारा व्यंग्य किया है। निसंदेह ये कविताएं कम्युनिस्ट पार्टी को ध्यान में रखकर लिखी गई और उनका बहुत कुछ एकांगी है। किन्तु, इन कविताओं में ऐसा बहुत कुछ है, जो एक संवेदनशील प्राणी को तिलमिला देने वाला हैं।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद रूस में मजदूरों और किसानों की सरकार बनी, जिससे साम्राज्यवाद का घेरा बुरी तरह ध्वस्त हुआ। इस क्रांति की लहर समस्त एशिया में थी अत: भारत भी उसका एक हिस्सा बना। 'तीन सयाने नेता' नामक कविता में कवि कहता है-

आज एशिया के जागे हैं प्राण।
इन्कलाब का घूम गया फरमान।
जागे सदियों के सोये फिर आज।

विद्रोह तो पूरे भारत में हो रहे थे, किन्तु ऐसा कोई मजबूत नेता नहीं था। जो राष्ट्रीय स्तर पर उनका नेतृत्व कर सके। रजनी पामदत्त ने इस स्थिति पर विचार व्यक्त करते हुए लिखा है- ''द्वितीय विश्वयुद्ध के तुरन्त बाद भारत में जनउभार तो आया, किन्तु उसे मान्यता प्राप्त (Official) राष्ट्रीय आन्दोलन का एकता बद्ध कारगर नेतृत्व सुलभ नहीं था।''[5]

अकाल और भुखमरी से जनता बेहाल थी बेरोजगारी से लोग इधर उधर भटक रहे थे। वे अपने हक के लिए लड़ रहे थे। कवि कहता है- ''युद्ध के बाद बेकारी बढ़ रही थी लाखों मजदूर छंटनी का शिकार हो रहे थे। यह लड़ाई उनके पूरे वर्ग की लड़ाई थी''[6]

अंग्रेजों तथा मिलमालिकों द्वारा छंटनी किए गये मजदूरों के पास दर-दर ठोकरें खाने के अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं था। वे बेबस होकर कह उठते हैं-

अब ढाई लाख मजूरों की छंटनी का हुक्म सुनाया है,
हिन्दुस्तानी मजदूरों पर यह पहला दांव चलाया है।
इस तेजी से बेकार बने हम दर-दर की ठोकर खाएं,
यह हुक्म दिया है जालिम ने हम बेघर बेबस मर जाएं।

चूंकि, कांग्रेस ने सुलह-समझौतावादी नीति अपना रखी थी अत: अंग्रेजों के साथ-साथ कांग्रेसी नेता भी मिलमालिकों से मिलकर जुझारू मजदूरों पर हमले करवा रहे थे। इन्हीं साम्प्रदायिक हमलों में कानपुर का मजदूर हिरई मारा गया था। कवि मजदूरों के दुख को अपनी कविता 'मजदूर शहीद हिरई की याद में' कुछ इस प्रकार व्यक्त करता है-

जालिम ने भी मजदूरों पर खूब जोर अजमाया है,
पस्त और बीमार हरी को घूंसा मार गिराया है।
कच्ची सी दीवार समझकर अपना दांव चलाया है,
लगी फूट की आग देश में तब हिम्मत कर पाया है।
देश को नंगा भूखा रखकर जिसने नाम कमाया है,
वह सारी जनता का दुश्मन नेता के मन भाया है।

डाक कर्मचारियों के हड़ताल पर चले जाने के कारण अंग्रेजों की संचार व्यवस्था भी ध्वस्त हो रही थी इसके समर्थन में कलकत्ते में सोलह लाख मजदूरों और क्लर्कों ने हड़ताल की इस स्थिति पर कवि व्यंग्य करता हुआ अपनी कविता के माध्यम से कहता है -

करें डाकिये भी हड़ताल, देखो यह कलजुग का हाल।
भोले भाले सीधो लोग, उनमें भी यह फैला रोग।
यह भी अच्छी चली बयार, बस हड़तालों की भरमार।
कभी रेलवई की हड़ताल, मिल मजदूरों की हड़ताल।
पुलिस फौज तक में हड़ताल, भंगी मेहतर की हड़ताल।
बाहर भीतर सब हड़ताल, करें सेठानी भी हड़ताल।

जगह-जगह हड़ताले हो रही। थी। जनता अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रही थी उसी समय जनता को कांग्रेसी शासकों के भारी दमन का सामना करना पड़ा। उसे जनयुग बन्द करना पड़ा। शीघ्र ही उसने 'नया युग' के नाम से एक और पत्र निकाला। जिसमें जनता का समर्थन करते हुए कवि शंकर शैलेन्द्र ने लिखा है-

हर जोर जुल्म की टक्कर में हड़ताल हमारा नारा हैं।
तुमने मांगे ठुकराई हैं, तुमने तोड़ा है हर वादा,
छीना हमसे सस्ता अनाज, तुम छंटनी पर हो आमादा,
तो अपनी भी तैयारी है, तो हमने भी ललकारा है,
हर जोर जुल्म की टक्कर में हड़ताल हमारा नारा है।

इस संघर्ष से अंग्रेजों को अब खतरा महसूस होने लगा था। मजदूरों में अपनी आजादी को लेकर जो जुनून था, वह अब किसी भी दीवार को तोड़ने के लिए तैयार था। मजदूर जोश में आगे बढ़ता है तो अंग्रेज कह उठते हैं-

आजादी का झण्डा लेकर आया जब मजदूर,
जोश देखकर कहते हो तब रहना हमसे दूर,
रोटी की आजादी की इनके भीतर भी चाह,
नहीं रोक सकता अब कोई मजदूरों की राह।

इसी संदर्भ में रामविलास शर्मा गौतम बुद्ध चट्टोपाध्याय का हवाला देते हुए कहते हैं- ''फरवरी 1946 में अंग्रेज शासक देख रहे थे कि 1857 के विद्रोह के और भी बड़े और अधिक सफल संस्करण का खतरा पैदा हो गया है।''[7]

इस जन उभार में किसान, मजदूर और गरीब जनता ही नहीं बल्कि सेना के जबान भी कंधे से कंधा मिलाकर चल रहे थे। रामविलास शर्मा लिखते हैं- ''आन्दोलन तेजी से आगे बढ़ता गया केवल नागरिक जनता में नहीं, वरन् सैन्य दलों में भी भारत के लिए यह एक नया विकास था। x x x इस समय सैनिक दलों में, खासकर वायु सेना, जल सेना में जोरों से हड़ताल चल रही थी। इनसे पता चलता था कि अंग्रेजों की सत्ता का जो आधार था, उस सत्ता की जो मशीनरी थी, वही, भीतर से अब टूट रही थी। फरवरी 1946 में जलसेना के विद्रोह ने, जैसे-बिजली चमके, भारतीय क्रांति के परिपक्व होते हुए सभी तत्वों को एकबारगी प्रकट कर दिया। जल सेना के विद्रोह ने, भारत में उसे दिये गये आम जनता के समर्थन ने और बम्बई में श्रमिक जनता के वीरता पूर्ण मुकावले ने जता दिया कि भारत में एक नया युग शुरू हो गया है और यह सब भारतीय इतिहास का एक महान मार्ग चिन्ह है।''[8]

बंगाल के क्रांतिकारी वीर लाल मोहन सेन गृहयुद्ध करते-करते शहीद हो गये थे। उस वीर शहीद को श्रद्धांजलि देते हुए कवि लिखता है-

मिटा न पाई तुमको गोली गोलों की बौछार।
दोनों ओर वही, धरती पर लाल रक्त की ध्र।
नहीं एक बंगाल गर्व करता था हिन्दुस्तान,
पराधीन जनता के जब बने हृदय के हार।
x x x
जला रहा था ब्रिटिश राज को जो वागी बंगाल।
हत्या की लपटों से खुद ही सुलग उठा बंगाल।
सबसे पहले तुम्ही आग में कूदे अमर शहीद।
हाँ, सबसे पहले तुमको ही प्यारा था बंगाल।

इस सब के बावजूद अंग्रेजों और जमीदारों का अत्याचार जनता पर दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। वे 'फूट डालो और शासन करो' की नीति अपना देश को साम्प्रदायिकता के हवाले कर रहे थे। शर्मा जी कहते है -

जब बाभन सूद में फूट रहे, हिन्दू मुस्लिम तकरार करें।
तब ऐसे वीर लड़ाकों पर क्यों राज न साहूकार करें।

देश की कोई भी जाति दूसरों को दबाकर अपना विकास नहीं कर सकती विकास समस्त जातियों की श्रमिक जनता के सहयोग से होता है। पूंजीपतियों की सहज प्रवृत्ति होती है दूसरों को लूटने की अत: वैमनस्य फैलाना उनकी प्रवृत्ति में ही सामिल हैं। प्रोफेसर विपिन चन्द्र लिखते हैं- ''साम्प्रदायिकता का विकास आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से प्रतिक्रियावादी सामाजिक वर्गों और राजनीतिक शक्तियों अर्द्धसामंती जमींदारों और नौकरशाह रहे लोगों (जिन्हें डॉ. के. एम. अशरफ ने जागीरदार कहा है), व्यापारियों और साहूकारों तथा औपनिवेशिक शासन के हथियार के रूप में भी हुआ।''[9]

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद साम्प्रदायिकता और तानाशाही का ही वर्चस्व था। विपिन ठाकुर अपनी पुस्तक 'हिन्दी की मार्क्सवादी कविता में कहते हैं- ''राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ हिन्दुत्व का और मुस्लिम लीग इस्लाम का झण्डा उठाकर सामान्य जनता में वैमनस्य और कटुता उत्पन्न कर रहे थे। हिटलर को हिन्दुस्तान का एक वर्ग, शुद्ध आर्य सन्तान मानकर उससे सहानुभूति रखता था।''[10]

व्यंग्य के माध्यम से कवि ने इस स्थिति का सटीक वर्णन अपनी कविता 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' में किया है -

हिन्दू हिन्दुस्तान की,
जै हिटलर भगवान की,
जिन्ना पाकिस्तान की,
टोजो और जापान की,
x x x
हिन्दुस्तान हमारा है,
प्राणों से भी प्यारा है,
इसकी रक्षा कौन करे?
पाकिस्तान हमारा है,
प्राणों से भी प्यारा है।
इसकी रक्षा कौन करे?
बैठों हाथ पे हाथ धरे।
गिरने दो जापानी बम।

सत्यं शिंव सुन्दरम्।

जिस समय देश साम्प्रदायिकता की चपेट में था, उसी समय पंजाब में किसानों ने आन्दोलन कर दिया, किन्तु यह आन्दोलन अकेले साम्प्रदायिक हिंसा रोकने में समर्थ नहीं था। अत: इसके समर्थन में एक देशव्यापी किसान आन्दोलन की जरूरत थी, लेकिन अचानक यह सब होना असम्भव था। उन्होंने इसकी भूमिका में लिखा है- ''साम्प्रदायिक हिंसा फैलने पर देशव्यापी किसान आन्दोलन की बात सोचना आग लगने पर कुंआ खोदने जैसा था, किन्तु आग को बुझाने की सामर्थ्य जिस प्रकार पानी में होती है, उसी प्रकार साम्प्रदायिक हिंसा को बुझाने की सामर्थ्य क्रांतिकारी जनआन्दोलन में थी''[11]

अंग्रेजों की सुलह समझौते की नीति का इन दंगों से सीधा संबंध था। क्रांतिकारी जनआन्दोलन में सभी जातियां एकजुट हो रही थी। उनकी एकता साम्प्रदायिक फूट को खत्म करने का सबसे शक्तिशाली साधन थी -

हम जनता को एक करेंगे फूट की आग बुझायेंगे,
इस धरती से जुल्म सितम् का नाम निशान मिटायेंगे।
सब कौमें आजाद रहें, वह दुनिया नई बसायेंगे,
उस दुनियां में यों बेकस मजदूर न पीसे जायेंगे।

X X X

आग फूट की जो धधकाई उसको हमीं बुझायेंगे,
तन देकर भी इन लपटों से अपना देश बचायेंगे।

साम्प्रदायिक हिंसा को दबाने के नाम पर अंग्रेजी शासक तथा पूंजीपति वर्ग जनता पर कानूनी पाबन्दियां लगाते थे और उनका प्रयोग जनवादी आन्दोलन को दबाने में करते थे। जनवादी आन्दोलन को वे अपना शत्रु मानते थे। इस नीति का प्रयोग वे चाहे आपातकाल हो या फिर पंजाब का किसान आन्दोलन हर जगह करते थे। इसकी भूमिका में वे लिखते हैं- ''साम्राज्यवाद को इस तरह की हिंसा की जरूरत थी। जिसे 'फंडामेंटलिज्म' कहा जाता है, वह हमारा सुपरिचित सम्प्रदायवाद है। पहले इसकी जरूरत साम्राज्यवाद को कायम रखने के लिए थी, अब उसकी जरूरत युद्ध की तैयारी के लिए है।''[12]

अंग्रेजो ने साम्प्रदायिकता को अपने औजार के रूप में प्रयोग किया, ताकि जनता की शक्ति अंग्रेजों से सीधाो टकराने की बजाय साम्प्रदायिक हिंसा को रोकने में लगे। 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष' में प्रो. विपिन चन्द्र लिखते हैं- ''साम्प्रदायिकता को वह औजार कहा जा सकता है, जिसके जरिये मध्यवर्ग की राजनीति को उपनिवेशवाद और जागीरदार वर्गों की सेवा में लगा दिया। वस्तुत: साम्प्रदायिकता ही वह माध्यम थी, जिसका इस्तेमाल कर उपनिवेशवाद अपने सीमित सामाजिक आधार को, मजदूरों, किसानों, मध्यवर्ग और बुर्जुआ वर्ग के कुछ खास हिस्सों तक फैलाने में सफल हो सका, अन्यथा इन लोगों के हित उपनिवेशवाद से पूरी तरह टकराते थे।''[13]

जनता में शासन के प्रति भारी असंतोष था। वह साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देने के लिए कांग्रेस को जिम्मेदार ठहरा रही थी उन्होंने लिखा है- ''कांग्रेसी शासक मौखिक रूप से सम्प्रदायवाद का विरोध करते थे पर साम्राज्यवाद से उनकी समझौता करने की नीति का ही परिणाम था सम्प्रदायवाद का प्रसार। सम्प्रदायवाद की काट करने की शक्ति जनसंघर्षों में है और कांग्रेसी नेता इन्हीं जनसंघर्षों का दमन कर रहे थे। जनता में शासन के प्रति भारी असंतोष है।''[14]

कवि कहता है -

मगर वो इनकलाब के लिये यों बेकरार है।
नयी-नयी सुलह के अब नए-नए करार हैं।
भले ही नौ अगस्त हो, मगर जुलूस बन्द हो।
करो न कोई काम जो न लाट को पसन्द हो।
भले निहत्थी भीड़ पर चलाए कोई गोलियां।
अमन अमन अमन की तुम सुनाए जाओ लोरियां।

अंग्रेजों से मिलकर कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग द्वारा किये गये अत्याचारों के कारण ही जनता का विश्वास उनसे उठ चुका था, वह कम्युनिस्टों के नेतृत्व में यह आन्दोलन करना चाहती थी इसका सबसे बड़ा कारण यह था कि ''आम जनता में साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष में एकता कायम करने की जबरदस्त आकांक्षा थी यह चीज कलकत्ता, बम्बई तथा अन्य प्रमुख नगरों के विशाल प्रदर्शनों में देखी गई। वहां जनता के हाथों एक साथ कांग्रेस और मुस्लिम लीग के झण्डे थे और बहुत जगह कम्युनिस्टों के झण्डे भी थे, दुर्भाग्य से नीचे की इस एकता के अनुरूप ऊपर एकता कायम न हुई।''[15]

इस स्थिति का यथार्थ चित्रण कवि ने अपनी कविता 'लपटों के उठने पर कैसी यह पानी की मांग' के माध्यम से किया है -

क्या हिन्दु ईसाई, क्या मजदूर किसान,
कलकत्ते में किया सभी ने एक साथ बलिदान,
लीग कांग्रेस कम्युनिस्ट के सबके झण्डे साथ।
मुद्दत से भाई-भाई ने यहां मिलाया हाथ।

इन कविताओं को पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि स्वतंत्रता संग्राम में मजदूर, किसान और गरीब जनता की कितनी अहम भूमिका रही है। उन्होंने साम्प्रदायिक एवं साम्राज्यवादी ताकतों का सामना किस प्रकार निडर होकर किया है। इनके द्वारा किये गये क्रांतिकारी आन्दोलनों का महत्व कितना अधिक था। इसको स्वीकार करते हुए जवाहर लाल नेहरू एक सभा में कहते है- ''इस हड़ताल का बड़ा राजनीतिक महत्व है। हमारे जबानों ने

जोश में कुछ ऐसे काम किये हो, जिनसे हम सहमत न हो यह सम्भव है, किन्तु इससे उसका महत्व कम नहीं होता। देश में इस घटना की जो जबरदस्त प्रतिक्रिया हुई है, उस पर पानी नहीं फेरा जा सकता। उसने दिखा दिया है कि हिन्दुस्तानी फौज और भारतीय जनता के बीच जो लोहे की दीवार खड़ी की थी, वह ढह गई है।''[16]

अत: कहा जा सकता है कि इस कविता संकलन के माध्यम से कवि ने स्वतंत्रता संघर्ष में फैले सम्प्रदायवाद का पुरजोर विरोध ही नहीं किया बल्कि इन कविताओं के माध्यम से कवि ने उनको यह भी बताया कि उन्हें किस प्रकार और किस दिशा में आगे बढ़ना है। उन्होंने इन कविताओं के अध्ययन की उपयोगिता बताते हुए कहा है कि- ''आज का भारत पहले के भारत से काफी भिन्न है, फिर भी आज देश के सामने जो समस्यायें हैं, वे पहले के सिलसिले से जुड़ी हुई हैं। उस दौर के इतिहास का अध्ययन आज के भारत के लिए शिक्षाप्रद है।''[17]

संदर्भ:-

1. विपिन ठाकुर, हिन्दी की मार्क्सवादी कविता, आगरा प्रगति प्रकाशन, भारत 1978, पृ. 124
2. नरेन्द्र पुण्डरीक, डॉ॰ शर्मा का व्यक्तित्व, राष्ट्रीय संगोष्ठी, स्मारिका 2012 हंसराज कालेज दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली-9, पृ. 65
3. चन्द्रबली सिंह, उद्भावना, डॉ. रामविलास शर्मा महाविशेषांक द्वितीय संस्करण 2012 अंक 104, पृ. 18
4. रामविलास शर्मा-सदियों के सोये जाग उठे, वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1988, पृ. 33
5. रजनी पामदत्त-इण्डिया टुडे, प्युपिल्स पब्लिशिंग हाउस बाम्बे 1949, पृ. 537
6. रामविलास शर्मा, सदियों के सोये जाग उठे, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 1988, पृ. 9
7. वही, पृ. 18
8. वही, पृ. 17
9. प्रो. विपिन चन्द्र-भारत का स्वतंत्रता संघर्ष 1995, हिन्दी माध्यमिक कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली-9, पृ॰ 328
10. विपिन ठाकुर, हिन्दी की मार्क्सवादी कविता, आगरा प्रगति प्रकाशन भारत, 1978, 125
11. रामविलास शर्मा, सदियों के सोये जाग उठे, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 1988, पृ॰ 20
12. वही, पृ. 20
13. प्रो. विपिन चन्द्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष 1995, हिन्दी माध्यमिक कार्यान्विय निदेषालय दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली-9, पृ॰ 328
14. रामविलास शर्मा, सदियों के सोये जाग उठे, वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1988, पृ. 19
15. रजनी पामदत्त, इण्डिया टुडे, प्युपिल्स पब्लिज़िंग हाउस बाम्बे 1949, पृ. 537
16. रामविलास शर्मा, सदियों के सोये जाग उठे, 1988 वाणी प्रकाशन दिल्ली, पृ. 8
17. वही, पृ. 5

◆◆◆

पृष्ठ 67 का शेष

4. कमलेश सिंह: हिन्दी आत्मकथा: स्वरूप एवं साहित्य, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1989, पृ0 19
5. उर्मिला भटनागर: हिन्दी उपन्यास साहित्य में दाम्पत्य चित्रण, अर्चना प्रकाशन, दिल्ली, 1981
6. विश्वबन्धु 'व्यथित': हिन्दी का आत्मकथा साहित्य, राध प्रकाशन, दिल्ली, 1989, पृ0 27
7. साधना अग्रवाल: वर्तमान हिन्दी महिला कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995 , पृ0 13
8. हरिवंश राय बच्चन: क्या भूलूँ क्या याद करूँ, राजपाल एंड सन्श, दिल्ली, 1969,पृ0 187
9. हरिवंश राय बच्चन: नीड़ का निर्माण फिर, राजपाल एंड सन्श, दिल्ली, 1970, पृ0 14
10. हरिवंश राय बच्चन: क्या भूलूँ क्या याद करूँ, पृ0189-190
11. हरिवंश राय बच्चन: नीड़ का निर्माण फिर, पृ0 27
12. हरिवंश राय बच्चन: क्या भूलूँ क्या याद करूँ, पृ0 235
13. वही, पृ0 235
14. हरिवंश राय बच्चन: नीड़ का निर्माण फिर, पृ0 184
15. वही, पृ0 191
16. वही, पृ0 199
17. कमलेश सिंह: हिन्दी आत्मकथा: स्वरूप एवं साहित्य, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1989,
18. हरिवंश राय बच्चन: नीड़ का निर्माण फिर,, पृ0 124
19. वही, पृ0 184
20. वही, पृ0 195
21. वही, पृ0 162
22. हरिवंश राय बच्चन: दशद्वार से सोपान तक, राजपाज एंड सन्श, दिल्ली, 1985, पृ0, 460
23. वही, पृ0 34
24. वही, पृ0 323
25. वही, पृ0 470

◆◆◆